सब धर्मों का सार : आत्मानुभूति

हे भव्य जीवों ! एक मात्र निज आत्मा में ही लीन हो जाओ, हमेशा इसमें ही सन्तुष्ट रहो, इससे ही तृप्त हो जाओ। तुम्हें उत्तम सुख की प्राप्ति अवश्य होगी; क्योंकि –

अचिन्त्यशक्तिः स्वयमेव देवश्चिन्मात्रचिन्तामणिरेष यस्मात्।
सर्वार्थसिद्धात्मतया विधत्ते ज्ञानी किमन्यस्य परिग्रहेण ।।

यह आत्मा स्वयं ही अचिन्त्य शक्तिवाला देव है, चैतन्यरूप चिन्तामणि रत्न है। अतः सर्वार्थ हैं सिद्ध जिसके, ऐसे ज्ञानी जीवों को अन्य के परिग्रह से क्या लाभ ? ज्ञानी किसी पर की आशा क्यों करे ?

आत्मानुभूति सब धर्मों का सार है। इससे धर्म का आरंभ होता है और धर्म की पूर्णता भी इसकी पूर्णता में है अर्थात् अनन्त आत्मलीनता की दशा ही धर्म की पूर्णता है। इसके परे धर्म की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। आत्मानुभूति ही आत्मधर्म है।

अन्तरोन्मुखी वृत्ति द्वारा आत्मसाक्षात्कार की स्थिति का नाम ही आत्मानुभूति है। वर्तमान प्रकट ज्ञान को पर लक्ष्य से हटाकर स्वतत्त्व में लगा देना ही आत्म-साक्षात्कार की स्थित है। स्वानुभूति प्राप्त करने की प्रक्रिया निरन्तर तत्त्व मंथन की प्रक्रिया है; किन्तु तत्त्व मंथनरूप विकल्पों से भी आत्मानुभूति प्राप्त नहीं होगी; क्योंकि कोई भी विकल्प ऐसा नहीं जो आत्मानुभूति को प्राप्त करा दे।

आत्मानुभूति प्राप्त करने के लिये समस्त जगत पर से दृष्टि हटानी होगी। समस्त जगत से आशय है कि आत्मा से भिन्न शरीर कर्म आदि जड़ (अचेतन) द्रव्य तो पर है ही, अपने आत्मा को छोड़कर अन्य चेतन पदार्थ भी पर हैं तथा आत्मा में प्रतिसमय उत्पन्न होनेवाली विकारी-अविकारी पर्यायें (दशा) भी दृष्टि का विषय नहीं हो सकती। उनसे भी परे अखण्ड त्रिकाली चैतन्य ध्रुव आत्म-तत्त्व है, वही एक मात्र दृष्टि का विषय है। जिसके आश्रय से आत्मानुभूति प्रकट होती है, जिसे की धर्म कहा जाता है।

ह्न तीर्थंकर भगवान महावीर और उनका सर्वो.तीर्थ पृष्ठ : १२५

वीतराग-विज्ञान

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का, घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : २३ २६८ अंक : ४

प्रवचनसार पद्यानुवाद

ज्ञेयतत्त्वप्रज्ञापन महाधिकार

ज्ञान-ज्ञेयविभाग अधिकार

दो अंश चिकने अणु चिकने-रूक्ष हों यदि चार तो।
हो बंध अथवा तीन एवं पाँच में भी बंध हो।।१६६।।
यदि बहुप्रदेशी कंध सूक्षम-थूल हों संस्थान में।
तो भूजलादि रूप हों वे स्वयं के परिणमन से।।१६७।।
भरा है यह लोक सूक्षम-थूल योग्य-अयोग्य जो।
कर्मत्व के वे पौद्गलिक उन खंध के संयोग से।।१६८।।
स्कन्ध जो कर्मत्व के हों योग्य वे जिय परिणति।
पाकर करम में परिणमें न परिणमावे जिय उन्हें।।१६९।।
कर्मत्वगत जड़पिण्ड पुद्गल देह से देहान्तर।
को प्राप्त करके देह बनते पुन-पुनः वे जीव की।।१७०।।
यह देह औदारिक तथा हो वैक्रियक या कार्मण।
तेजस अहारक पाँच जो वे सभी पुद्गलद्रव्यमय।।१७१।।
चैतन्य गुणमय आतमा अव्यक्त अरस अरूप है।
जानो अलिंगग्रहण इसे यह अनिर्दिष्ट अशब्द है।।१७२।।

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

अपना स्वार्थ कौन नहीं चाहेगा

पूज्यपाद आचार्य श्री देवनन्दि के प्रसिद्ध ग्रन्थ इष्टोपदेश के ३१ वें श्लोक पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। मूल श्लोक इसप्रकार है ह्न

कर्म कर्महिताबन्धि जीवो जीवहितस्पृहः।
स्व-स्वप्रभाव भूयस्त्वे स्वार्थं को वा न वांछति ।।३१।।

कर्म, कर्म का हित चाहता है और जीव, जीव का हित चाहता है। अपना अपना प्रभाव बढ़ने पर, कौन अपना स्वार्थ नहीं चाहेगा ?

(गतांक से आगे...)

यह भगवान आत्मा अज्ञानवश राग-द्वेष करता है; जिसका निमित्त पाकर नवीन कर्मपुद्गल परमाणु स्वयं आकर बंधते है और पूर्व के कर्मोदयवश जीव स्वयं विकारी भावरूप परिणमन करता है। इसप्रकार मोह और विकार का निमित्त पाकर पौद्गलिक कर्म आत्मा के साथ बंधते हैं और पौद्गलिक कर्मों के निमित्त से आत्मा अपने शुद्धस्वरूप को छोड़कर मिथ्यात्व-राग-द्वेषरूप परिणमन करते हुए पुण्य में मिठास, भोग में सुख और स्त्री-पुत्रादि में आनंद मानते हुये जगत में भ्रमण करता है। यह जीव का भाव अर्थात् चेतनात्मक परिणाम है। उसमें पूर्व के कर्म का उदय निमित्तमात्र है।

यहाँ आचार्य कहते हैं कि जिसका जब प्रभाव होता है, तब वह दूसरों पर अपना प्रभाव डालकर अपना स्वार्थ साधना चाहता है; क्योंकि कर्म का प्रभाव देखते हुये कर्म का अपना हित होता है और आत्मा का प्रभाव देखते हुये आत्मा अपना हित करता है।

अज्ञानी जीव मोह और अविद्या के वशीभूत होकर शरीर, स्त्री-पुत्र, परिवार, देश आदि का उपकार करता है; किन्तु उसमें स्वयं का अपकार और कर्म का उपकार हो रहा है, यह वह नहीं जानता। वास्तव में कर्म तो जड़ है। वह अपना हित कभी भी नहीं कर सकता; लेकिन अज्ञानी कर्माधीन होकर कर्म का हित करता है।

यह जीव अपने शुद्ध, चैतन्यमूर्ति ज्ञायक भगवान आत्मा को छोड़कर पुण्य में

अपना हित मानता है तथा उसी में सावधानी करता है और स्वभाव में असावधानी करता है। इसप्रकार यह जीव पुण्य से प्राप्त संयोगों में लाभ और पाप के उदय से प्राप्त संयोगों में प्रतिकूलता मानता है, यही तो मूढ़पना है।

यदि बाह्य की प्रतिकूलता के कारण जीव का अहित हो तो नरकों की अनंत प्रतिकूलता के बीच जीव का हित कैसे हो, उन्हें सम्यग्दर्शन कैसे हो ? सातवें नरक की भयंकर वेदना को तो केवली ही जानते है और नारकी ही भोगते है।

कोई युवा राजकुमार अपने हारे हुये राज्य को पुन: प्राप्त करने के विकल्प से भयंकर युद्ध लड़ रहा हो; किन्तु लड़ते-लड़ते वहीं मरण करें और सातवें नरक में जाकर जन्म लेवे और वहाँ उस घोर वेदना के बीच भी ऐसा विचार करे की यह वेदना ! इससे मुझे छुटकारा मिल सकता है कि नहीं ? और ऐसा विचार करते हुये एकदम शरीर और रागादि से भिन्न अपनी आत्मा का अनुभव हो जाय, तो उसे बाहर की प्रतिकूलता अनुभव में नहीं आती।

यहाँ एक रात पीड़ा हो तो वह बहुत बुरी लगती है, पीड़ा सहन नहीं होती; किन्तु नरक में तो इससे भी अनन्तगुणी पीड़ा है, तथापि उसके बीच भी भेदज्ञान हो सकता है। इसमें बाहर की अनुकूलता-प्रतिकूलता कुछ नहीं कर सकती।

अपने परमेश्वर को स्वीकार न करके यह जीव पर में अधिकार मानता है; किन्तु वहाँ भी इसे दु:ख ही भोगना पड़ता है। यह जीव अनंतबार त्यागी-मुनि हुआ। कहा भी है ह्न

मुनिव्रत धार अनंतबार ग्रीवक उपजायो।
पै निज आतमज्ञान बिना सुख लेश न पायो।।

आत्मा के अनुभव बिना बाह्य में लेशमात्र भी आनन्द नहीं है और आत्मा का भान करें तो सातवें नरक की वेदना के बीच भी अतीन्द्रिय आनन्द का वेदन होता है। दौलतरामजी ने कहा है ह्न

बाहर नारककृत दु:ख भोगत, अंतर सुखरस गटागटी।

इसप्रकार मिथ्यादृष्टि करोड़पति हो, खजांची हो, चाहे कंगाल हो; फिर भी संयोग सुख-दु:ख का कारण नहीं है।

यहाँ कहते हैं कि कभी जीव बलवान होता है तो कभी कर्म बलवान होता है अर्थात् कोई जीव अपनी शक्ति का बहुमान छोड़कर कर्म के उदयवश प्राप्त पुण्य-पाप भावों में बहुमान करे तो उसमें कर्म का ही बहुमान है, वहाँ कर्म बलवान है ह्न ऐसा कहने में आता है तथा कोई जीव अपने पुरुषार्थ की हुंकार भरते हुये स्वभाव की जागृति करके केवलज्ञान प्राप्त करने की तैयारी करे तो वह जीव का बलवानपना है, उसमें आत्मा का हित है।

अज्ञानी परद्रव्य और कर्मादि के साथ मित्रता करता है, उनके संयोग में आनन्द मानता है। कर्मोदय के समय शुभाशुभभावों में आनन्द मानता है; लेकिन वास्तव में यह तो अपना अहित करके कर्म का ही हित करना है।

जैसे खेल खेलते वक्त किन्हीं दो मित्रों में झगड़ा हो जावे तब कोई १० वर्ष का बालक अपने से बड़े १२ वर्ष के बालक को मारे। तब वह १२ वर्ष का बालक अपनी माँ के पास जाकर उसकी शिकायत करे तो माँ क्या कहेगी ? अरे मूरख ! तू बड़ा है और वह छोटा है, फिर भी उसने तुझे मारा ऐसी फरियाद लेकर तू मेरे पास आया है, क्या तुझे शरम नहीं आती ? वैसे ही यह अज्ञानी जीव फरियाद करता है कि अरे ! कर्मों ने मुझे मार ड़ाला। उससे भगवान सर्वज्ञदेव कहते है कि हे मूरख ! तू भगवान आत्मा महाबलवान है और तुझे कर्म हैरान करते हैं, यह तो शरम की बात है।

इसप्रकार जीव और कर्म का बैर अनादि से चल रहा है। जो पर और विकार की महिमा करे, वह वास्तव में कर्म का ही हित करता है। अपने स्वरूप में जुड़ान न करके कर्म के उदय में जुड़ान करता है और कर्म को बलवान बनाते हुये नवीन कर्म बांधता है, इसप्रकार कर्म की परंपरा चलती रहती है।

जीव अपनी भूल से स्वयं विकार करता है, यदि कर्म से विकार होवे तो कर्म नष्ट होनेपर विकार भी नष्ट होवे; किन्तु जीव अपनी भूलवश विकार करता है, अत: जब अपनी भूल मिटे तब विकार नष्ट होंगे। विकार होने में कर्म का उदय निमित्त है तथा कर्मबंधन में जीव के विकारीभाव निमित्त हैं। कर्म तो अपने आप से ही बंधते हैं, आत्मा तो अबंधस्वभावी है, उसे बंधन कैसा ? यही वस्तु स्थिति है।

जीव अपने शुद्धस्वरूप को भूलकर भावबंध करता है और उस भावबंध का

निमित्त पाकर द्रव्यबंध होता है। जीव की स्वभावाधीन और विकाराधीन ऐसी दो अवस्थाएँ है। विकाराधीन अवस्था से कर्म का उपकार होता है और स्वभावाधीन अवस्था से जीव का अपना उपकार होता है।

यह जीव स्वयं पुरुषार्थहीन-नपुंसक बनकर पर का माहात्म्य करता है। शास्त्रों में आता है कि भगवान आत्मा अपने शुद्धस्वरूप की श्रद्धा-ज्ञान छोड़कर मात्र शुभभावों की रचना करता है; इसकारण जीव अपने वीर्यस्वभाव की रचना करने के लिये नपुंसक हो गया । वीर्यगुण का मूल कार्य तो स्वरूप की रचना करना है। **स्वरूपनिर्वर्तनसामर्थ्यरूपा वीर्यशक्तिः।** स्वभाव के आश्रय से शुद्ध श्रद्धा-ज्ञान-चारित्र-सुख-शांति प्रगट करना वीर्य का कार्य है, इसके अतिरिक्त शुभाशुभभाव की रचना करना वीर्य नहीं, नपुंसकता है।

अपने स्वभाव की रचना करे सो आत्मवीर्य और विकार की रचना करे सो कर्मवीर्य है। अज्ञानी विकार की रचना करके कर्म का हित करता है और चारगति में परिभ्रमण करता है; जबकि ज्ञानी स्वभाव की रचना करके मुक्ति में गमन करता है।

यहाँ मुनिराज आत्मा के हित की विधि बताते हुये कहते हैं कि ह्न काललब्धि से बलवान हुआ जीव अपना हित करता है, जिसे अपने द्रव्य का ज्ञान हुआ उसे काललब्धि अर्थात् पुरुषार्थ की जागृति का काल और स्वभाव का ज्ञान होता है।

ऐसे सुगुरू के उपदेश का निमित्त पाकर जो जीव पुरुषार्थपूर्वक अपने स्वभाव की दृष्टि करता है, वह राग-द्वेष-निमित्तादि से भिन्न, एक समय की पर्याय से भी भिन्न अपने स्वभाव को जानता है। उसे स्वभावबल प्रगटता है और कर्मबल नष्ट होता है।

जो अपना हित करने के लिये भागता है, वह स्वात्मोपलब्धिरूप मोक्ष को चाहता है। जितना अपना स्वरूप है, उतना ही पर्याय में प्रगट होता है। उसी का नाम मोक्ष है, उसमें ही अपना परमहित है।

मोक्ष कह्यो निज शुद्धता, जे पावे ते पंथ।
समजाव्यो संक्षेपमां, सकल मार्ग निर्ग्रन्थ।।

श्रीमद् रायचन्दजी ने छोटीसी उम्र में ही यह बात लिखी थी। अपने निर्मल आनंद की दशा जिस मार्ग से प्राप्त होती हो, वही मोक्षपंथ है। दूसरा कोई मोक्षमार्ग नहीं है। **(क्रमशः)**

जीव उपयोगमय है

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार की दसवीं गाथा पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्म-रसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है।

गाथा मूलतः इसप्रकार है -

जीवो उवओगमओ उवओगो णाणदंसणो होइ।
णाणुवओगो दुविहो सहावणाणं विहावणाणं ति।।१०।।

जीव उपयोगमय है। उपयोग ज्ञान और दर्शन है। ज्ञानोपयोग दो प्रकार का है ह्न स्वभावज्ञान और विभावज्ञान।

(गतांक से आगे ...)

११-१२वीं गाथा में जो स्वरूपप्रत्यक्ष का वर्णन आयेगा वही यहाँ है। अभी हमने स्वभावज्ञान उपयोग की बात की ह्न उसमें से प्रत्यक्ष और परोक्ष की बात गाथा ११-१२ में लेंगे, ११वीं गाथा में 'असहाय' शब्द पड़ा है, उसी पर से टीका में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष की बात निकालेंगे।

स्वभाव ज्ञानोपयोग के दो भेद है ह्न कारणरूप स्वभाव ज्ञानोपयोग तथा कार्यरूप स्वभाव ज्ञानोपयोग, उसमें से यहाँ जो कारणरूप स्वभावज्ञानोपयोग है, उसी को अग्रिम गाथा में स्वरूप प्रत्यक्ष उपयोग कहेंगे। वह दोनों भिन्न नहीं है। कारणशुद्ध पर्याय में तो सभी गुणों की पर्यायें आ जाती है; किन्तु यहाँ तो उपयोग की ही बात है। इस गाथा में मात्र उपयोग के ही भेद बताये हैं। प्रत्यक्ष-परोक्ष की बात इस गाथा में नहीं की गई है।

आत्मा उपयोगमय है, उस उपयोग की यहाँ पहिचान कराई गई है। उपयोग के दर्शन और ज्ञान दो भेद हैं, उसमें से ज्ञानोपयोग के भी स्वभावज्ञान और विभावज्ञान ह्न ऐसे दो भेद हैं। उसमें से स्वभावज्ञान भी कारण और कार्य के भेद से दो प्रकार का है। केवलज्ञानोपयोग तो कार्यस्वभाव ज्ञानोपयोग है और उसके कारणरूप उपयोग कारणस्वभाव ज्ञानोपयोग है। यह दोनों ही पर्याय है; तथापि पर्याय में से पर्याय आवे

ह्न ऐसी बात नहीं।

यह तो अपूर्व अलौकिक बात है। टीकाकार मुनिराज निर्ग्रंथ दिगम्बर भावलिंगी संत थे। उन्होंने अपूर्व अमृत उडेला है। उसे चखो तो सही !

आप्त, आगम और तत्त्वों की श्रद्धा को व्यवहार सम्यग्दर्शन कहा। उसमें जीव तत्त्व के वर्णन में यह सब समाविष्ट हो जाता है। जीव कैसा है ? जीव उपयोगमय है। उपयोग का अर्थ क्या है ? आत्मा का चैतन्य अनुवर्ती परिणाम उपयोग है। वह उपयोग तो धर्म है और जीव धर्मी। वह उपयोग ज्ञान और दर्शन दो प्रकार का है, उसमें से यहाँ ज्ञानोपयोग के प्रकारों का वर्णन है। ज्ञानोपयोग के स्वभावज्ञानोपयोग और विभाव ज्ञानोपयोग दो भेदों में से स्वभावज्ञानोपयोग के भी दो भेद हैं। एक कारणस्वभाव ज्ञानोपयोग ह्न जो सभी जीवों में अनादि-अनंत है और दूसरा कार्यस्वभाव ज्ञानोपयोग जो सादि-अनंत है। विभाव ज्ञान के ७ प्रकार आगे कहेंगे।

जिसको कार्यस्वभावज्ञान प्रकट होता है, उसके विभावज्ञान नहीं होता, किन्तु विभावज्ञानवाले को भी कारणस्वभावज्ञान तो त्रिकाल होता है। फिर भी अज्ञानी को उसका भान नहीं है। ज्ञानी को साधकदशा में कारणस्वभावज्ञान का भान है; तथापि अभी विभावज्ञान भी है। विभावज्ञान और कारणस्वभावज्ञान दोनों एकसाथ हों; परन्तु विभावज्ञान और कार्यस्वभावज्ञान ह्न यह दोनों उपयोग एकसाथ नहीं हो सकते।

कारणस्वभाव ज्ञानोपयोग तो सभी जीवों को तीनोंकाल वर्त रहा है, वह ध्रुव है; एक आत्मा के उपयोग के सब भेद एकसाथ नहीं हो सकते।

स्वभाव की तरफ का यथार्थज्ञान करे तो इन भेदों के ज्ञान को व्यवहार ज्ञान कहा जाये।

सकलविमल केवलज्ञान उपयोग प्रकट हुआ, वह कार्यस्वभाव ज्ञानोपयोग है। केवलज्ञान भी एक अवस्था है ह्न चैतन्य का अनुसरण करके होनेवाला परिणाम है। यह परिणाम पूर्व के चार ज्ञानों का अनुसरण करके नहीं होता; अपितु चैतन्य का ही अनुसरण करके होता है, उसको केवलज्ञानावरणी ने रोका था और उसका अभाव हुआ, इसलिये केवलज्ञानोपयोग प्रकट हुआ ह्न ऐसा नहीं है। आत्मा का चैतन्य अनुवर्ती परिणाम ही उपयोग है ह्न यह व्याख्या समस्त प्रकार के उपयोगों में लागू

पड़ती है।

स्वभाव ज्ञानोपयोग गुण नहीं है, पर्याय है। उसमें कार्यस्वभावज्ञानोपयोग केवलज्ञान है और वह केवलज्ञानोपयोग किसी निमित्त के अथवा पूर्व पर्याय के अनुसरण करने से नहीं हुआ; अपितु चैतन्य के अनुसरण करने से ही हुआ है। यह कार्यस्वभाव ज्ञानोपयोग अमूर्तिक है। इन्द्रियों के अवलम्बन से रहित है। प्रकट होने के बाद जैसा का तैसा ही रहता है। इसलिये अविनाशी अव्याबाध है। यह केवली भगवान के होता है। जीव तत्त्वों में इतनी गम्भीरता है, इतने भाव भरे हैं, यदि इतनी सर्व व्याख्या लागू न पड़े तो जीव तत्त्व पूरा नहीं होता।

कार्यस्वभावज्ञानोपयोग नवीन प्रकट होता है, उसका कारण कौन ?

परमपारिणामिकभाव से रहनेवाला जो त्रिकाल निरुपाधिक सहज ज्ञान है, वही कारणस्वभाव ज्ञानोपयोग है, इसी उपयोग को स्वरूप प्रत्यक्ष ज्ञानोपयोग कहेंगे।

चैतन्यस्वभाव को अनुसरण करनेवाले ज्ञान का परिणाम त्रिकालध्रुवरूप से रहनेवाला है, वह केवलज्ञान प्रकट होने का कारण है। परमपारिणामिक भाव में रहनेवाला है, त्रिकाल निरुपाधिक है और सहज शुद्ध है ह्न ऐसा ज्ञानोपयोग ही कारण स्वभावज्ञानोपयोग है। जो एकमात्र केवलज्ञान का कारण है, अन्य कोई कारण नहीं।

केवलज्ञान तो कार्यस्वभाव ज्ञानोपयोग है और यह कारणस्वभाव ज्ञानोपयोग परमपारिणामिकभाव से स्थित त्रिकाल निरुपाधिक सहज ज्ञान है। यहाँ सहजज्ञान कहा वह गुण नहीं, अपितु परिणाम है। और यह दोनों भी स्वभाव ज्ञानोपयोग है।

नवमीं गाथा में जीवादि छह द्रव्य बतलाये थे, वहाँ जीव का छह बोलों से वर्णन किया ह्न

१) अनादि से संसारी जीव दश प्राणों से जीते हैं, इसलिये संग्रहनय से दशप्राणों से जीवें वह जीव ह्न ऐसा कहा।

२) व्यवहारनय से द्रव्यप्राणों से जीता है ह्न वह जीव है।

३) निश्चयनय से जीव जड़प्राणों से रहित अपने चैतन्यप्राणों से ही जीता है।

४) शुद्धसद्भूत व्यवहार से, आत्मा केवलज्ञानादि शुद्धगुणों का आधार होने

से, उसको कार्यशुद्धजीव कहा।

५) जिसके अभी मतिज्ञानादि विभावगुण वर्त रहे हैं, किन्तु केवलज्ञान प्रकट नहीं हुआ हैं ह्न ऐसे साधक को अशुद्धजीव कहा। अशुद्धसद्भूतव्यवहार से आत्मा मतिज्ञानादि का आधार है, इसलिये वह अशुद्धजीव है, इसमें साधक को लिया। जीव के वर्णन में अनादि के अज्ञानी, साधक तथा पूर्णता को प्राप्त हो गये ह्न ऐसे सभी जीव आ जाते है, इसलिये यहाँ उनका वर्णन किया।

६) शुद्धनिश्चयनय से केवलज्ञानादि कार्य प्रकट होने में कारणरूप जो त्रिकाल शक्तिस्वभाव है, वह कारणशुद्धजीव है।

इसप्रकार छह बोलों से जीव की पहिचान कराने के पश्चात् शेष पाँच द्रव्यों की संक्षेप में पहिचान कराई।

अब इस दसवीं गाथा में जीव के उपयोग का लक्षण कहा है। जीव उपयोगमय है। उस उपयोग का यहाँ वर्णन चल रहा है।

जीव उपयोगमय है और वह उपयोग ज्ञान-दर्शन के भेद से दो प्रकार का है। ज्ञान-दर्शन के भेदों को मिलाकर उपयोग के चौदह प्रभेद इस भाँति है ह्न

(१) कारणस्वभावज्ञानोपयोग

(२) कार्यस्वभावज्ञानोपयोग

(३-९) विभावज्ञानोपयोग ह्न (मति, श्रुत, अवधि, मन:पर्यय, कुमति, कुश्रुत, कुअवधि)

(१०) कारणस्वभावदर्शनोपयोग

(११) कार्यस्वभावदर्शनोपयोग

(१२-१४) विभावदर्शनोपयोग (चक्षु, अचक्षु, अवधि)

इन सभी में उपयोग का लक्षण लागू पड़ता है। उपयोग का अर्थ है ह्न चैतन्य-अनुवर्ती परिणाम।

इस गाथा में प्रत्यक्ष-परोक्ष की बात नहीं की है। उपयोग में प्रत्यक्ष-परोक्ष किसे कहा जाय यह स्पष्टीकरण ११-१२ वीं गाथा में करेंगे। यहाँ सहजज्ञान उपयोग कहा है, उसे ही ११-१२ वीं गाथा में स्वरूपप्रत्यक्ष कहेंगे। **(क्रमश:)**

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : एक जीव दूसरे जीव को दु:खी नहीं कर सकता ह्न यह ठीक है; परन्तु असाताकर्म का उदय तो दु:ख का कारण है न ?

उत्तर : ऐसा भी नहीं है। असाता का उदय तो बाह्य प्रतिकूल संयोग का सम्पादन करता है और उस संयोग के काल में दुख की कल्पना तो जीव स्वयं मोहभाव से करे तो ही उसे दुख होता है; अत: असाता कर्म के उदय से दुख नहीं होता; किन्तु मोह भाव से ही होता है। असाता के उदय के समय भी यदि स्वयं मोह से दुख की कल्पना न करे और आत्मा को पहिचानकर उसके अनुभव में रहे तो दुख नहीं होता। बाह्य संयोगों को बदला नहीं जा सकता; परन्तु संयोग की ओर से दृष्टि हटाकर वेदन को बदला जा सकता है।

प्रश्न : राग को जीव करता है, कर्म करता है और जीव तथा कर्म दोनों मिलकर करते हैं ह्न ऐसा कहने में आता है। तो इन तीनों में सही क्या समझना चाहिये ?

उत्तर : राग तो जीव के अपराध से होता है, इसलिये जीव राग का कर्त्ता है, लेकिन जीवस्वभाव में विकार होने का कोई गुण नहीं है; इसलिये द्रव्यदृष्टि की अपेक्षा राग का कर्त्ता कर्म है। कर्म व्यापक होकर राग को करता है ह्न ऐसा कहने में आता है और प्रमाण का ज्ञान कराना हो तो 'जीव और कर्म दोनों मिलकर राग को करते हैं' ह्न ऐसा कहने में आता है। जैसे 'पुत्र' माता और पिता दोनों का कहा जाता है।

भगवान आत्मा ज्ञायकज्योति है, वह विकार का कर्त्ता नहीं। विकार का कर्त्ता मिथ्यात्व, अविरति, कषाय और योग ह्न ये चार प्रकार के कर्म और उनके १३ प्रकार के प्रत्यय हैं। आत्मा शुद्ध चैतन्यमूर्ति है, वह विकार का कर्त्ता नहीं।

प्रश्न : कर्त्ता-कर्माधिकार में विकार का पुद्गल के साथ व्याप्य-व्यापक क्यों कहा ?

उत्तर : स्वभाव दृष्टि से देखें तो विकार का कारण स्वभाव है ही नहीं, इससे विकार का निमित्त जो कर्म है, उसके साथ विकार को व्याप्य-व्यापक कहने में आता है।

दशलक्षण महापर्व धूम-धाम से मनाया गया

दिनांक ८ सितम्बर से १७ सितम्बर, २००५ तक जैन परम्परानुसार मनाये जानेवाले सार्वभौमिक एवं त्रैकालिक दशलक्षण महापर्व को देश-विदेश में बड़ी धूम-धाम से मनाया गया। पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा लगभग ५२६ स्थानों पर विद्वान भेजे गये। पर्व के दौरान सभी स्थानों के जैन मंदिरों में पूजन-विधान प्रवचन, प्रौढ़ एवं बाल कक्षा, भक्ति, सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि आयोजनों के माध्यम से महती धर्मप्रभावना हुई। देश के कोने-कोने से प्राप्त समाचारों को जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) में प्रकाशित किया जा चुका है। कुछ समाचार यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

१. अहमदाबाद (नवरंगपुरा-गुज.) : यहाँ श्री महावीरस्वामी दिगम्बर जैन मंदिर नवरंगपुरा के तत्त्वावधान में नारणपुरा स्थित डी. के. पटेल हॉल में पर्व के अवसर पर प्रतिदिन प्रात: गुरुदेवश्री के सी.डी. प्रवचनोपरान्त ख्यातिप्राप्त आध्यात्मिक प्रवक्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, जयपुर के प्रवचनसार परमागम की गाथा ६३-८६ पर सरस-सुबोध शैली में लगभग १२०० साधर्मियों की उपस्थिति में मार्मिक व्याख्यान हुये तथा रात्रि में पण्डित पीयूषकुमारजी शास्त्री, जयपुर के समयसार के निर्जरा अधिकार पर सारगर्भित प्रवचन हुये।

आपके प्रवचनों के पूर्व दोनों समय कु. अनुप्रेक्षा जैन, मुम्बई के प्रवचन हुये। साथ ही पण्डित अनेकान्तजी भारिल्ल के तीन प्रवचन एवं पण्डित श्रीपालजी शास्त्री के एक प्रवचन का लाभ भी समाज को मिला। इस अवसर पर श्रीमती शोभनाबेन सत्येन्द्रभाई शाह परिवार द्वारा दशलक्षण मण्डल विधान का आयोजन किया गया।

ज्ञातव्य है कि दिनांक १५ सितम्बर को डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल का एक प्रवचन श्रीमद् राजचन्द्र ज्ञानमन्दिर, पालडी में **मैं स्वयं भगवान हूँ** विषय पर हुआ। पर्व के पश्चात् क्षमावाणी के अवसर पर डॉ. भारिल्ल ने सोनगढ़ एवं उमता के भूगर्भ में से निकले जिन मंदिरों की वंदना भी की।

इस अवसर पर स्मारक ट्रस्ट की ओर से प्रकाशित १४ हजार ६०० रुपयों का सत्साहित्य तथा ७९९५ घंटो के सी.डी. व कैसिट्स घर-घर पहुँचे। **ह्न अजितभाई मेहता**

२. जयपुर (श्री टोडरमल स्मारक भवन) : यहाँ श्री टोडरमल दिग. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के तत्त्वावधान में प्रात: दशलक्षण मण्डल विधान का आयोजन किया गया तथा गुरुदेवश्री के सी.डी. प्रवचन के पश्चात् पण्डित शांतिकुमारजी पाटील के समयसार के संवर अधिकार पर तथा सायंकाल पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल के दशलक्षण विधान की जयमाला पर सरस-सुबोध शैली में प्रवचन हुये। दोपहर में इन्दौर से पधारे पण्डित दिलीपजी बाकलीवाल द्वारा चौबीस ठाणा विषय पर गहन चिन्तन प्रस्तुत किया गया।

रात्रि में प्रवचन के पश्चात् टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के छात्रों तथा महिला मण्डल-बापूनगर के सहयोग विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रम कराये गये। **ह्न अजय जैन**

३. कोटा (राज.) : यहाँ पोरवाल दि. जैन मंदिर रामपुरा में आद. बाबू जुगलकिशोरजी 'युगल' के आत्म कल्याणकारी मार्मिक प्रवचनों के अतिरिक्त पण्डित संजीवकुमारजी गोधा, जयपुर के प्रतिदिन प्रात: परमभावप्रकाशक नयचक्र एवं रात्रि में धर्म के दशलक्षण विषय पर सरल-सुबोध शैली में प्रवचनों का लाभ मिला। दोपहर में करणानुयोग की कक्षा ली गई।

४. कोलकाता (प.बंगाल) : यहाँ नवनिर्मित श्री दि. जैन मंदिर पद्मोपुकुर में पर्व के अवसर पर ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री, सनावद के प्रात: समयसार एवं रात्रि में दशधर्मों पर मार्मिक प्रवचन हुये। प्रात: पण्डित सुबोधजी शास्त्री शाहगढ द्वारा पूजन विधान सम्पन्न कराये गये। इस अवसर पर दिसम्बर माह में होनेवाले पंचकल्याणक की तैयारी जोर-शोर से प्रारंभ की गई। **ह्न सुरेश पाटनी**

५. लंदन (इंग्लैण्ड) : यहाँ प्रात: दशलक्षण पूजन के पश्चात् पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री, देवलाली के समयसार की १७ से १९ गाथा पर एवं रात्रि में मोक्षमार्गप्रकाशक तथा दशधर्मों पर बोधगर्भित प्रवचन हुये। इसी अवसर पर लन्दन में होनेवाले आगामी पंचकल्याणक की पूर्व तैयारी भी की गई। प्रतिदिन गुरुदेवश्री के सी.डी.प्रवचनों का लाभ भी मिला।

६. वाशिंगटन डी.सी. (अमेरिका) : यहाँ डी.सी. जैन समिति और स्वाध्याय मंडल के तत्त्वावधान में सिल्वरस्प्रिंग मेरिलैंड के जैन मन्दिर में पण्डित दिनेशभाई शाह व डॉ. उज्ज्वलाजी शाह, मुम्बई के पंचलब्धी, कार्य-कारण रहस्यआदि विषयोंपर मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला। वाशिंगटन के अतिरिक्त डेलावेएट, न्यूजर्सी, टेनेसी, केंटेकी आदि स्थानों से पधारे साधर्मियों ने उक्त कार्यक्रम का लाभ लिया। **ह्न निरेन नागदा**

७. टीकमगढ़ (म.प्र.) : यहाँ श्री दिगम्बर जैन मंदिर (मुमुक्षु मण्डल) में पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा के प्रात: समयसार, दोपहर में नियमसार एवं रात्रि में पद्मनंदी पंचविंशतिका तथा रत्नकरण्ड श्रावकाचार के आधार से दशधर्मो पर मार्मिक प्रवचन हुये। आपके अतिरिक्त पण्डित अंकितजी शास्त्री, कोलारस द्वारा दोपहर में छहढाला एवं सायंकाल बालकक्षा ली गई। प्रात: दशलक्षण विधान हुआ तथा रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रम कराये गये।

८. हुबली (कर्नाटक) : यहाँ बाल ब्र. यशपालजी जैन, जयपुर के तीनों समय छह द्रव्य एवं सात तत्त्वों के स्वरूप पर मार्मिक प्रवचन हुये। आपके अतिरिक्त पण्डित अभिजीतजी अलगोंडर द्वारा प्रात: सामूहिक पूजन के पश्चात् पूजन का स्वरूप, दोपहर में विभिन्न सैद्धान्तिक विषय एवं रात्रि में दशधर्मों पर प्रवचन किये गये। ज्ञातव्य है कि अभिजीतजी के सत्तुर में भी दो प्रवचन हुये।

९. उदयपुर (सेक्टर-११) : यहाँ प्रात: नित्यनियम पूजन के पश्चात् बाल ब्र.पण्डित अभिनन्दनकुमारजी शास्त्री खनियांधाना के समयसार कलश, दोपहर में मोक्षमार्गप्रकाशक के तृतीय अध्याय एवं रात्रि में दशधर्मों पर प्रवचन हुये।

१०. नागपुर (महा.) : यहाँ श्री महावीर दिग. जैन मंदिर में पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जैन जबलपुरवालों के तीनोंसमय क्रमश: समयसार, ज्ञानगोष्ठी एवं दशधर्मों पर मार्मिक प्रवचन हुये। इस अवसर पर श्रीमती शीलादेवी मुलायमचन्द सिंघई परिवार द्वारा कल्पद्रुम मण्डल विधान का आयोजन भी किया गया। विधान के सम्पूर्ण कार्य पण्डित अभिनवजी शास्त्री जबलपुर एवं पण्डित

विनीतजी ग्वालियर के निर्देशन में पण्डित स्वप्निलजी शास्त्री एवं ब्राह्मी मण्डल की बालिकाओं ने सम्पन्न कराये । सायंकाल बालकक्षा तथा रात्रि में विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रम कराये गये।

११. जयपुर (राजस्थान जैन सभा) : यहाँ श्री दिगम्बर जैन मंदिर बड़े दीवानजी के मन्दिर में पण्डित शांतिकुमारजी पाटील के दसलक्षण पूजन की जयमाला के आधार से दशधर्मों पर सारगर्भित प्रवचन हुये। **ह्न महेन्द्र पाटनी**

१२. हिम्मतनगर (गुज.) : यहाँ पण्डित राजकुमारजी शास्त्री, बांसवाड़ा के प्रात: समयसार, दोपहर में पंचास्तिकाय एवं रात्रि में दशधर्म व इष्टोपदेश पर मार्मिक प्रवचन हुये। प्रतिदिन पूजन-विधान, भक्ति एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम श्री चेतनभाई दोशी के सहयोग से कराये गये।

१३. मुम्बई (भूलेश्वर) : यहाँ श्री दिगम्बर जैन मन्दिर में प्रात: संगीतमय नित्यनियम पूजन के पश्चात् पण्डित रमेशचन्दजी शास्त्री'दाऊ', जयपुर के मोक्षमार्गप्रकाशक एवं रात्रि में दशधर्मों पर मार्मिक व्याख्यान हुये। पूजन, बालकक्षा एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम पण्डित निखिलजी शास्त्री, कोतमा ने श्री राजकुमारजी जबलपुर के सहयोग से सम्पन्न कराये। **ह्न अशोक जैन**

१४. मुम्बई (भायन्दर-वेस्ट) : यहाँ श्री दिग. जैन महावीर मंदिर में प्रात: दशलक्षण मण्डल विधान के पश्चात् पण्डित धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री, जयपुर के प्रात: प्रवचनसार, दोपहर में समयसार नाटक एवं रात्रि में दशधर्मों पर सरल सुश्राव्य शैली में बोधगर्भित प्रवचन हुये। रात्रि के सांस्कृतिक कार्यक्रमों में स्थानीय विद्वान पंकजभाई शाह एवं वरूण शास्त्री का सहयोग रहा।

१५. अलवर (राज.) : यहाँ चेतन एन्क्लेव स्थित श्री महावीरस्वामी चैत्यालय में डॉ. श्रेंयासकुमारजी सिंघई, जयपुर के प्रात: समयसार पर एवं सायंकाल जिनेन्द्रभक्ति के पश्चात् श्री आदिनाथ जैन मन्दिर में दशधर्म पर मार्मिक प्रवचन हुये। सम्पूर्ण कार्यक्रमों में पण्डित अजीतजी शास्त्री का भी सहयोग रहा।

१६. इन्दौर (म.प्र.) : यहाँ साधनानगर में पण्डित अनिलकुमारजी शास्त्री भिण्ड के दोनों समय समयसार एवं दशलक्षण धर्मों पर मार्मिक प्रवचन हुये। दोपहर में पण्डित सुबोधजी सिंघई सिवनी द्वारा मोक्षशास्त्र पर विवेचना की गई।

१७. इन्दौर (म.प्र.) : यहाँ माणक चौक में निर्माणाधीन कुन्द. कहान स्वाध्याय भवन में डॉ. कपूरचन्दजी 'कौशल' भोपाल के प्रात: समयसार एवं रात्रि में मोक्षमार्ग प्रकाशक पर प्रवचन हुये। दोपहर में तत्त्वार्थसूत्र का वाचन किया गया।

१८.ग्वालियर (म.प्र.) : यहाँ मुमुक्षु मण्डल, लश्कर में विदुषी राजकुमारीजी जैन, जयपुर के प्रात: समयसार के संवर अधिकार पर तथा सायंकाल जैसी मति वैसी गति कक्षा के उपरान्त दशलक्षण धर्म पर प्रवचन हुये। समाज की ओर से दशलक्षण विधान का आयोजन किया गया।

१९. पुणे (महा.) : यहाँ स्वाध्याय भवन में पण्डित राकेशकुमारजी शास्त्री नागपुर के तीनों समय समयसार, प्रवचनसार एवं मुनिदशा के स्वरूप पर मार्मिक प्रवचन हुये। **ह्न प्रशांत दोशी**

२०. अलीगढ़ (मंगलायतन) : यहाँ पण्डित देवेन्द्रकुमारजी जैन बिजौलिया के प्रात: दृष्टि का विषय, दोपहर में तत्त्वार्थसूत्र एवं रात्रि में दशधर्मों पर मार्मिक प्रवचन हुये।

पण्डित रतनचन्द भारिल्ल उच्चकोटि के प्रतिभाशाली साहित्यकार : प्रतिभा पाटील

नई दिल्ली : राजस्थान की राज्यपाल श्रीमती प्रतिभा पाटील ने कहा कि पण्डित रतनचन्द भारिल्ल उच्चकोटी के प्रतिभाशाली साहित्यकार के साथ शांत और सरल व्यक्तित्व के धनी हैं।

श्रीमती पाटील ९ अक्टूबर, रविवार को नई दिल्ली के कुन्दकुन्द भारती भवन में सिद्धान्त चक्रवर्ती आचार्य श्री विद्यानन्दजी मुनिराज के सान्निध्य में आयोजित आचार्य अमृतचन्द्र पुरस्कार २००५ के समर्पण समारोह में मुख्यअतिथि के रूप में बोल रहीं थी। भारतीय संस्कृति, साहित्य और आध्यात्मिक विषय पर दिया जानेवाला यह पुरस्कार इस वर्ष श्री टोडरमल दि. जैन सि.महाविद्यालय के प्राचार्य, जैन पथप्रदर्शक के सम्पादक, जैनागम के मूर्धन्य विद्वान पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, जयपुर को प्रदान किया गया।

इस अवसर पर आचार्य विद्यानन्दजी ने पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल के कृतित्व की प्रशंसा करते हुए कहा कि इसीतरह हर व्यक्ति को देश और समाज के हित में सोचते हुये देश की प्रगति में योगदान करना चाहिये, क्योंकि अच्छे संस्कारों के बिना भौतिक प्रगति निरर्थक है, अत: भारिल्लजी की भांति हम सबको नई पीढी को भारतीय संस्कृति से शिक्षित करने की जिम्मेदारी का ईमानदारी से निर्वहन करना चाहिये। आचार्यश्री ने पण्डित रतनचन्दजी के विद्वत परम्परा को बढ़ानेवाले कार्यों की सराहना करते हुये उन्हें अपना मंगल आशीर्वाद प्रदान किया।

श्रीमती पाटील ने भारिल्लजी को पुरस्कार स्वरूप शॉल, प्रशस्ति-पत्र और एक लाख रुपये का चैक प्रदान करते हुये विश्वास व्यक्त किया कि पण्डितजी के साहित्य और आध्यात्मिक लेखन से नई पीढ़ी में अच्छा सन्देश जायेगा और उन्हें अच्छा इन्सान बनने की प्रेरणा तथा मार्गदर्शन भी मिल सकेगा।

प्रशस्ति में आपको **सिद्धान्तसूरि** की मानद उपाधि प्रदान की गई। प्रशस्ती वाचन करते हुये अ. भा.दि.जैन विद्वत्परिषद के महामंत्री डॉ. सत्यप्रकाश जैन दिल्ली ने पण्डित भारिल्लजी के बहुआयामी व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला। विद्वत्परिषद् के प्रचारमंत्री श्री अखिल बंसल ने माल्यार्पणकर पण्डितजी का सम्मान किया। पुरस्कार समर्पणकर्त्ता श्री पवन जैन (अमेरिका) ने आभार व्यक्त किया।

सम्मानित मनीषी भारिल्लजी ने अपने उद्बोधन में कहा कि सन् १९८६ में जब आचार्यश्री का जयपुर प्रवास था, तब उन्होंने अपनी '**जिनपूजन रहस्य**' पुस्तक आचार्य श्री को भेंट की थी। पुस्तक पढकर आचार्य श्री ने इस छोटीसी पुस्तक को '**नोबेल पुरस्कार**' मिलने जैसी पुस्तक बताया था। जिससे प्रेरित होकर यह कृति ढाई लाख की संख्या में समाज के हाथों में पहुँची।

भारिल्ल परिवार ने एक लाख रुपये की पुरस्कार राशि में ५० हजार रुपये और जोड़कर साहित्य प्रकाशन की शृंखला को बनाये रखने के लिये न्यास बनाने की घोषणा की। मंगलाचरण डॉ. वीरसागरजी ने किया। श्रीमती सरयू दफ्तरी ने अतिथियों का स्वागत किया। कार्यक्रम का संचालन श्री सतीश जैन (आकाशवाणी) ने किया। **ह्न अखिल बंसल**

८ वाँ आध्यात्मिक शिक्षण शिविर सम्पन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन में पण्डित टोडरमल सर्वोदय ट्रस्ट द्वारा आयोजित आठवें आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर का उद्घाटन गुरुवार, दिनांक ६ अक्टूबर, २००५ को श्री निहालचन्दजी ओसवाल, जयपुर के करकमलों से हुआ।

इस अवसर पर आयोजित सभा की अध्यक्षता श्री विमलकुमारजी जैन नीरू कैमिकल्स दिल्ली ने की। मुख्य अतिथि के रूप में श्री महीपालजी बांसवाड़ा एवं श्री जगनमलजी सेठी इम्फाल उपस्थित थे। साथ ही विशिष्ट अतिथि के रूप में अनेक महानुभाव मंचासीन थे।

उद्घाटन सभा के पूर्व गुरुदेवश्री का सी.डी. प्रवचन एवं पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल का प्रवचन हुआ। झण्डारोहण श्री महेन्द्रभाई भालाणी परिवार मुम्बई ने तथा प्रवचन मण्डप का उद्घाटन श्री प्रदीपकुमारजी चौधरी परिवार किशनगढ ने किया। इस अवसर पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल ने अपने मार्मिक उद्बोधन में वर्तमान में शिविरों की उपयोगिता पर प्रकाश डाला।

शिविर के आमंत्रणकर्त्ता श्रीमती मीना-अनूप शाह मुम्बई, श्री प्रेमचन्दजी बजाज कोटा, डॉ. संजयकुमार राजीवकुमार सुपुत्र श्री शिखरचन्दजी सर्राफ विदिशा तथा स्व. राजमलजी पाटनी की स्मृति में उनकी धर्मपत्नी श्रीमती रतनदेवी पाटनी एवं सुपुत्र श्री अशोककुमार पाटनी कोलकाता को पण्डित टोडरमल सर्वोदय ट्रस्ट द्वारा प्रशस्ति-पत्र भेंट कर सम्मानित किया गया। शिविर में चौंसठऋद्धि विधान का आयोजन किया गया।

शिविर में मुख्य प्रवचन के रूप में प्रतिदिन प्रात: तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के समयसार के सर्वविशुद्धज्ञानाधिकार पर मार्मिक प्रवचन हुये तथा रात्रि में पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली के मोक्षाधिकार पर सारगर्भित प्रवचन हुये।

मुख्य प्रवचन से पूर्व रात्रि में पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील एवं डॉ. दीपकजी शास्त्री के प्रवचनों का लाभ प्राप्त हुआ।

शिविर में प्रतिदिन पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल द्वारा **षट्कारक,** ब्र. यशपालजी जैन द्वारा **गुणस्थान विवेचन,** पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री द्वारा **मोक्षमार्गप्रकाशक** एवं **नयचक्र,** पण्डित शांतिकुमारजी पाटील द्वारा **द्रव्यसंग्रह,** पण्डित संजीवकुमारजी गोधा द्वारा **क्रमबद्धपर्याय** एवं पण्डित पीयूषकुमारजी शास्त्री द्वारा **लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका** की कक्षाओं के माध्यम से महती धर्म प्रभावना हुई।

दोपहर की व्याख्यानमाला में डॉ. श्रेयांसकुमारजी शास्त्री, पण्डित जितेन्द्रजी राठी जयपुर, डॉ. भागचन्दजी शास्त्री, पण्डित रमेशचन्दजी जैन (लवाण), पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री, पण्डित प्रवीणजी शास्त्री, पण्डित राजेन्द्रजी बंसल, पण्डित कमलचन्दजी पिड़ावा एवं पण्डित विक्रान्तजी पाटनी के विविध विषयों पर प्रवचन हुये।

शिविर के मध्य डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल द्वारा लिखित **रक्षाबन्धन और दीपावली** नामक पुस्तक का विमोचन हुआ। विमोचन के पश्चात् दो दिन में ही लगभग २५०० प्रतियाँ बिक गई।

शिविर में कुल १६ हजार रुपयों का सत्साहित्यतथा २७८० घंटों के सी.डी.व ऑडियो कैसिट्स घर-घर पहुँचे।

1. विदुषी ब्र. सुशीलाजी का देहविलय-

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के सान्निध्य में रहकर धर्मसाधना करनेवाली ब्रह्मचारिणी बहनों में वरिष्ठ व विदुषी ब्र. सुशीलाजी का दिनांक 12 अक्टूबर, 2005 को सायंकाल देहविलय हो गया। आपके जाने से मुमुक्षु समाज की अपूरणीय क्षति हुई है।

आपने स्थानकवासी सम्प्रदाय में साध्वी की दीक्षा ली थी, लेकिन गुरुदेवश्री की प्रेरणा से दिगम्बर धर्म स्वीकार किया व उनके ही सान्निध्य में रहकर तत्त्वज्ञान का गहरा अध्ययन किया। आपकी तत्त्व की पकड़ बहुत सूक्ष्म थी। गुरुदेवश्री भी आपकी प्रशंसा किया करते थे।

गुरुदेव के पश्चात् गुजरात ही नहीं, हिन्दी प्रान्त में भी तत्त्वप्रचार-प्रसार में आपका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। आप अनेक नगरों में महिनों रहकर कक्षाएँ लेती थीं। आपकी शैली बड़ी सुबोध व सरल थी। जयपुर में पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा संचालित गतिविधियों से प्रभावित थी तथा महाविद्यालय के छात्रों से भी आपको बहुत स्नेह था।

२. जैन विद्वत् परम्परा की एक और कड़ी टूटी-

जैनदर्शन के प्रख्यात विद्वान विशिष्ट प्रतिभा के धनी डॉ. देवेन्द्रकुमारजी शास्त्री नीमच का 11 अक्टूबर, 2005 को अहमदाबाद (गुज.) में देहावसान हो गया है। आपके जाने से प्राचीन जैन विद्वत्परंपरा की एक और कड़ी टूट गई। इससे जैनसमाज की अपूरणीय क्षति हुई है।

आपका जन्म चिरगाँव, जिला-झांसी में हुआ। आप शासकीय महाविद्यालय नीमच (म.प्र.) में हिन्दी के प्राध्यापक के रूप में अनेक वर्षों तक कार्यरत रहे। हिन्दी के विभागाध्यक्ष भी रहे।

शासकीय सेवा से निवृत्त होने के बाद भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित जैन साहित्य के प्रकाशन व सम्पादन में अपना बहुमूल्य योगदान प्रदान किया। वीतराग सत्श्रुत प्रभावना ट्रस्ट, भावनगर द्वारा शास्त्र भण्डारों एवं प्राचीन पाण्डुलिपियों के सूचीकरण के कार्य में आपका महत्त्वपूर्ण सहयोग रहा। अभी आप भाण्डारकर ओरिएण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूणे (महा.) के अनुबन्ध पर अपभ्रंश व प्राकृत का बृहद्शब्दकोश बनाने में संलग्न थे।

जैन तत्त्वज्ञान के प्रचार-प्रसार में अपना अपूर्व योगदान देनेवाली उक्त दोनों आत्माओं को पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय एवं वीतराग-विज्ञान (मासिक) परिवार श्रद्धांजलि अर्पित करते हुये भावना भाता है कि दिवंगत आत्मायें शीघ्र ही सिद्धत्व को प्राप्त करे। साथ ही आपके परिजन तत्त्वज्ञान के अवलम्बन से धैर्य धारण करें। **ॐ शांति ! शांति !! शांति !!!**

आगामी कार्यक्रम ....

पश्चिम बंगाल की राजधानी **आमादेर कोलकाता** में श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट के अन्तर्गत श्री 1008 महावीर स्वामी दि. जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का आयोजन **दिनांक 26 दिसम्बर से 1 जनवरी, 2006** पर्यन्त देश के ख्यातिप्राप्त विद्वानों की उपस्थिति में सम्पन्न होने जा रहा है, आप सभी को हमारा भावभीना आमंत्रण है। **ह्न प्रतिष्ठा महोत्सव समिति, भवानीपुर, कोलकाता**

राजस्थान की प्रसिद्ध आध्यात्मिक एवं मार्बल नगरी, किशनगढ़ में

श्री नेमिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव

(बुधवार, १६ नवम्बर से सोमवार, २१ नवम्बर २००५ तक)

आपको सूचित करते हुये अत्यन्त हर्ष हो रहा है कि राजस्थान की आध्यात्मिक एवं विश्वप्रसिद्ध मार्बल नगरी मदनगंज-किशनगढ़, जिला-अजमेर (राज.) में श्री महावीरस्वामी दि. जिनमंदिर, श्री नेमिनाथ समवशरण, स्वाध्याय भवन एवं वीतराग-विज्ञान पाठशाला भवन का भव्यतम नवनिर्माण हुआ है।

भगवान महावीरस्वामी एवं समवशरण जिनमंदिर में विराजमान होनेवाले जिनबिम्बों की प्रतिष्ठा हेतु श्री १००८ नेमिनाथ दिगम्बर जिनबिम्ब पंचकल्याणक महोत्सव बुधवार, दिनांक १६ नवम्बर से सोमवार, दिनांक २१ नवम्बर २००५ तक अनेक भव्य आयोजनों के साथ होने जा रहा है।

इस अवसर पर जिनवाणी की अजस्र धारा प्रवाहित करने हेतु अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त विद्वान विद्यावारिधि डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, डॉ. उत्तमचन्दजी जैन सिवनी, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, ब्र.कैलाशचन्दजी अचल, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी जैन आगरा, पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जैन जबलपुर, पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी उज्जैन आदि अनेक विशिष्ट विद्वान पधार रहे हैं। आपको इन सभी विद्वानों के प्रवचनों एवं कक्षाओं का अपूर्व लाभ भी प्राप्त होगा।

प्रतिष्ठाविधि के सम्पूर्ण कार्य बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री, सनावद के प्रतिष्ठाचार्यत्व में सहयोगी प्रतिष्ठाचार्य ब्र. धन्यकुमारजी बेलोकर, गजपंथा एवं पण्डित शांतिकुमारजी पाटील, जयपुर सम्पन्न करायेंगे ।

जिनधर्म की प्रभावना के सर्वोत्कृष्ट निमित्तभूत इस महायज्ञ में सभी साधर्मी बन्धुओं को सपरिवार एवं इष्ट मित्रों सहित पधारकर धर्मलाभ लेने हेतु हमारा वात्सल्यपूर्ण हार्दिक आमंत्रण है। ह्न निवेदक,

श्री नेमिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव समिति, किशनगढ़